



2026:AHC: 23799-DB

निर्णय सुरक्षित :- 21.01.2026

निर्णय पारित :- 04.02.2026

उच्च न्यायालय, इलाहाबाद

आपराधिक अपील संख्या- 810/2010

सुभाष

.....अपीलकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य

.....प्रत्यर्थी(गण)

अपीलकर्ता(गण) के अधिवक्ता	: अंबरीश कुमार कश्यप, एच.सी. सक्सेना, मुकेश कुमार झा, एन.के. सिंह, सुखवीर सिंह
प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता	: शासकीय अधिवक्ता

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री सुखवीर सिंह; राज्य की ओर से विद्वान ए.जी.ए.-प्रथम श्री जी.एन. कनौजिया को सुना गया और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया।

और 1 संबंधित वाद

अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री राय साहब यादव; राज्य की ओर से विद्वान ए.जी.ए.-प्रथम श्री जी.एन. कनौजिया को सुना गया और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया गया।

न्यायालय संख्या - 46

माननीय न्यायमूर्ति सिद्धार्थ

माननीय न्यायमूर्ति जय कृष्ण उपाध्याय

(माननीय न्यायमूर्ति सिद्धार्थ द्वारा प्रदत्त)

1- उपरोक्त संदर्भित आपराधिक अपीलें अपर सत्र न्यायाधीश, न्यायालय संख्या 1, फर्रुखाबाद द्वारा सत्र परीक्षण संख्या 515 वर्ष 1992 (राज्य बनाम बंशी और अन्य) में पारित निर्णय और आदेश दिनांक 29.01.2010 के विरुद्ध दायर की गई हैं, जिसमें अपीलार्थियों को धारा 302 भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत आजीवन कारावास और प्रत्येक को 10,000/- रुपये के जुर्माने की सजा से

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है और जुर्माना न भरने की स्थिति में छह माह का अतिरिक्त सश्रम कारावास भुगतना होगा।

2- अभियोजन का प्रकरण, प्रथम सूचना रिपोर्ट दिनांक 09.10.1990 के अनुसार यह है कि लगभग 04:30 बजे शाम को, सूचनादाता अपने गाँव के सह-ग्रामीणों बाबू राम, नन्हे और दिवारी लाल के साथ 09.10.1990 को अपने दरवाजे पर बैठा था। उसके गाँव के बंशी और राम स्वरूप ने जबरन उसका बाग जोत लिया था और पेड़ काट दिए थे और सूचनादाता ने उन्हें रोकने की कोशिश की थी, लेकिन वे नहीं माने। उपरोक्त कारण से अभियुक्त, बंशी पुत्र शंकर, सतीश पुत्र बंशी जो कि तमंचे से लैस थे; सुभाष पुत्र बंशी, जो कि लाइसेंसी सिंगल बैरल बंदूक से लैस था; सरोज पुत्र राम सेवक जो कि लाइसेंसी डबल बैरल बंदूक से लैस था और राम सेवक, राजा राम और रामवीर पुत्रगण भगवान जो कि फरसा, भाला और लाठी से लैस थे, आए और सूचनादाता पक्ष पर हमला कर दिया। उस समय सूचनादाता का पुत्र, विवेक और दीपक तथा बाबू राम के पुत्र अशोक और राजेंद्र शर्मा तथा राम प्रसाद का पुत्र देशराज घटना स्थल पर आ गए और सूचनादाता को बचाने की कोशिश कर रहे थे। तब सुभाष और सरोज ने अपनी बंदूकों से फायर किया और बंशी तथा सतीश ने तमंचों से फायर किया, जिसके कारण सूचनादाता का पुत्र, विवेक कुमार घायल हो गया। आस-पास के लोगों द्वारा ललकारने और अभियुक्तों को पकड़ने के उनके प्रयासों पर, वे फायरिंग करते हुए भाग गए। विवेक कुमार को गंभीर स्थिति में छिबरामऊ अस्पताल में भर्ती कराया गया और एफ.आई.आर दर्ज कराई गई।

3- प्रारंभ में एफ.आई.आर 09.10.1990 को अपराध संख्या 456 वर्ष 1990 के रूप में 08:30 बजे रात को 7 अभियुक्तों के विरुद्ध धारा- 147, 148, 149, 307 भा.द.सं. के अंतर्गत दर्ज की गई थी, लेकिन बाद में घायल, सूचनादाता का पुत्र विवेक कुमार, इलाज के दौरान 02.11.1990 को 03:25 बजे सुबह लाला लाजपत राय अस्पताल, कानपुर में मृत्यु को प्राप्त हो गया।

4- उसकी मृत्यु से पहले, घायल विवेक कुमार का मृत्युकालिक कथन 09.10.1990 को तहसीलदार, छिबरामऊ द्वारा दर्ज किया गया था, जिसमें उसने कहा कि अभियुक्त सुभाष ने 09.10.1990 को लगभग 04:30 बजे शाम को उस पर गोली चलाया। पहली गोली लगने के बाद वह गिर गया, उसके बाद उसे नहीं पता कि उस पर कितनी बार गोली चलायी गई। उसने कहा कि उसके अपने शरीर पर कई जगहों पर छर्रे लगे हैं और बंशी का पुत्र सुभाष उसके गाँव का निवासी है।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



5- उसकी मृत्यु के बाद विवेचना अधिकारी ने प्रकरण का विवेचना किया और 22.11.1990 को सभी सात अभियुक्तों के विरुद्ध धारा- 147, 148, 149, 323, 324, 325, 506, 427, 504, 302, 307 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप-पत्र प्रस्तुत किया गया। विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों के विरुद्ध धारा 149 भा.द.सं. सपठित धारा 148 और 302 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोप विरचित किए। अभियुक्तों ने आरोपों से इनकार किया और विचारण की मांग किया।

6- अभियोजन के प्रकरण को सिद्ध करने के लिए, अभियोजन ने पी.डब्ल्यू.-1, कैलाश नारायण शर्मा (सूचनादाता); पी.डब्ल्यू.-2, देशराज शर्मा; पी.डब्ल्यू.-3, डॉ. डी.के. दुबे; पी.डब्ल्यू.-4, डॉ. आर.बी. सिंह; पी.डब्ल्यू.-5, उप-निरीक्षक, राम सिंह; पी.डब्ल्यू.-6, उप-निरीक्षक, प्रेमपाल सिंह; पी.डब्ल्यू.-7, देवेंद्र दीक्षित, अपर जिलाधिकारी, एटा और पी.डब्ल्यू.-8, सेवानिवृत्त उप-निरीक्षक, एस.एस. ओझा को परीक्षित किया।

7- पी.डब्ल्यू.-1 ने न्यायालय के समक्ष यह कथन किया कि विवादित घटना से पहले अभियुक्त बंशी और अन्य ने उसके कटहल लूट लिए थे, जिसके संबंध में उसने एक परिवाद दायर किया था, जो कि द्वितीय अपर सत्र न्यायाधीश, कन्नौज के समक्ष लंबित था। जब विवेक की हत्या हुई, तब अभियुक्त बंशी और अन्य को उपरोक्त परिवाद में दोषमुक्त कर दिया गया था। उसी दिन, विवेक कुमार की हत्या से लगभग एक घंटे पहले, बंशी और अन्य अभियुक्तों ने उसका खेत जोत लिया था और दो साल पुराने हरे आम और कटहल के पेड़ काट दिए थे। पेड़ों को काटने, जो कि सूचनादाता के भाई के घर में लगाए गए थे, के संबंध में मौखिक कहासुनी हुई। उसके बाद सूचनादाता ने अपने बयान में एफ.आई.आर की अंतर्वस्तु को दोहराया। उसने आगे कहा कि अभियुक्तों ने पुलिस के साथ मिलीभगत कर लिया था और इसलिए उसने पंजीकृत डाक द्वारा पुलिस अधीक्षक को शिकायत और अपर जिलाधिकारी को आवेदन भेजा था, जिसे विचारण न्यायालय के समक्ष दाखिल और सिद्ध किया गया था।

8- पी.डब्ल्यू.-2 ने सिद्ध किया कि वह पी.डब्ल्यू.-1 के साथ अपने घर के दरवाजे पर बैठा था, जब अभियुक्त एफ.आई.आर और पी.डब्ल्यू.-1 के बयान में वर्णित हथियारों से लैस होकर आए और झगड़ा करने लगे। सुभाष और सरोज ने कहा कि चलो रोज-रोज का विवाद खत्म करते हैं और फिर सुभाष, सतीश, सरोज और बंशी ने विवेक पर गोली चलाया और वह गिर गया। अभियुक्तों को पकड़ने की कोशिश की गई, लेकिन वे भाग गए। उसके बाद, विवेक को छिबरामऊ अस्पताल

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



में भर्ती कराया गया और वहाँ से हैलेट अस्पताल, कानपुर ले जाया गया जहाँ 20-22 दिनों के बाद उसकी मृत्यु हो गई।

9- पी.डब्ल्यू.-3 ने सिद्ध किया कि 09.10.1990 को उसने विवेक कुमार को आई चोटों का परीक्षण किया और अपनी रिपोर्ट तैयार किया। संभवतः विवेक कुमार को 09.10.1990 को 04:30 बजे शाम तक आग्नेयास्त्रों से चोटें कारित की जा सकती थीं।

10- पी.डब्ल्यू.-4, शव परीक्षण डॉक्टर ने मृतक को आई मृत्यु-पूर्व चोटों और पोस्टमार्टम रिपोर्ट को सिद्ध किया और कहा कि विवेक कुमार की मृत्यु का कारण आघात, रक्तस्राव और यकृत का फटना था।

11- पी.डब्ल्यू.-5 एक औपचारिक साक्षी है जिसने एफ.आई.आर दर्ज करने और उसकी जी.डी. प्रविष्टि करने को सिद्ध किया। उसने आगे कहा कि इस वाद की जी.डी. नष्ट कर दी गई है।

12- पी.डब्ल्यू.-6 ने कहा कि 09.10.1990 को वह पुलिस स्टेशन- छिबरामऊ में उप-निरीक्षक के रूप में पदस्थापित था और उसने इस वाद का विवेचना किया था। उसने साक्षीगण के बयान दर्ज किए, एक नक्शा-नजरी तैयार किया। उसने 11.11.1990 को पी.डब्ल्यू.-1 का बयान दर्ज किया क्योंकि वह अपने बेटे के इलाज के सिलसिले में कानपुर गया था। पी.डब्ल्यू.-1 ने बताया कि उसके बेटे की मृत्यु 02.11.1990 को कानपुर के हैलेट अस्पताल में हो गई थी। उसने आगे सिद्ध किया कि अभियुक्त का धारा 307 भा.द.सं. के अंतर्गत आरोपण धारा 302 भा.द.सं. में बदल दिया गया था। उसने अभियुक्त सतीश और सरोज को गिरफ्तार किया।

13- पी.डब्ल्यू.-7 ने सिद्ध किया कि 09.10.1990 को वह तहसीलदार / मजिस्ट्रेट, जिला- छिबरामऊ के रूप में पदस्थापित था और उसने विवेक कुमार के बताए अनुसार उसका मृत्युकालिक कथन दर्ज किया। उसका मृत्युकालिक कथन लिखने के बाद, उसने उसे पढ़कर सुनाया और उस पर उसका अंगूठे का निशान लिया, जिसे उसने न्यायालय के समक्ष सिद्ध किया।

14- पी.डब्ल्यू.-8, सेवानिवृत्त उप-निरीक्षक, एस.एस. ओझा ने सिद्ध किया कि उसने पुलिस स्टेशन- छिबरामऊ में 02.11.1990 को जी.डी. संख्या 16 में विवेक कुमार की मृत्यु की सूचना दर्ज की थी। उसके बाद, उसने शव की पंचायतनामा कार्यवाही कराई और कांस्टेबल प्रेम कुमार के साथ हैलेट

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



अस्पताल गया और पोस्टमार्टम की औपचारिकताएं पूरी कराईं। अभियुक्त बंशी और राजाराम की विचारण के लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई।

15- अभियुक्त सतीश, सुभाष, सरोज, राम सरोज और रामवीर के बयान धारा 313 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दर्ज किए गए, जिन्होंने कहा कि उन्हें इस वाद में झूठा फँसाया गया है। अभियुक्त सुभाष ने कहा कि सूचनादाता ने उसके और सतीश के खिलाफ धारा- 395, 397 भा.द.सं. के अंतर्गत एक वाद दायर किया था, जिसमें उन्हें दोषमुक्त कर दिया गया है और इसलिए सूचनादाता की उनसे दुश्मनी थी और उन्हें इस वाद में झूठा फँसाया गया है। सुभाष ने सतीश के बयान को भी स्वीकार किया।

16- सुभाष और सतीश ने अपने बचाव के प्रकरण के समर्थन में पांच दस्तावेज़ दाखिल किए। चकबंदी न्यायालय के तीन दस्तावेज़ और प्रपत्र-23 दाखिल किए गए। एफ.आई.आर दिनांक 29.09.1987, जो देशराज द्वारा ओम प्रकाश, श्री कृष्ण, पूरन और भूरा के विरुद्ध धारा 307 भा.द.सं. के अंतर्गत दर्ज कराई गई थी, (छायाप्रति) दाखिल की गई। राज्य बनाम रामवीर और एक अन्य के वाद में एक अन्य दस्तावेज़, अपराध संख्या 523 वर्ष 1990 धारा- 307, 504, 506 भा.द.सं. के संबंध में एफ.आई.आर और आरोप-पत्र के रूप में दाखिल किया गया। अभियुक्त सतीश ने सत्र परीक्षण संख्या 63 वर्ष 1990, राज्य बनाम रामपाल, धारा- 395 और 397 भा.द.सं. के अंतर्गत पारित निर्णय दिनांक 30.08.2005 की प्रति दाखिल की, जिसमें अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया गया था।

17- प्रतिद्वंद्वी दलीलों को सुनने और विचारण न्यायालय और विचारण न्यायालय के निर्णय और आदेश को देखने के बाद, हम पाते हैं कि विचारण न्यायालय ने नामजद अभियुक्तों में से तीन, अर्थात् राजा राम (मृतक), राम स्वरूप और रामवीर को इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया है कि उन्हें फरसा, भाला, कांटा और लाठी के हथियार सौंपे गए थे, लेकिन मृतक को उपरोक्त हथियारों से कोई चोट नहीं पाई गई। विचारण न्यायालय द्वारा आपराधिक अपील संख्या 810 वर्ष 2010 में अपीलार्थी सुभाष और आपराधिक अपील संख्या 690 वर्ष 2010 में अपीलार्थी सतीश और सरोज को धारा 34 भा.द.सं. सपठित धारा 302 भा.द.सं. के अंतर्गत आजीवन कारावास की सजा सुनाई गई है, क्योंकि उन्हें आग्नेयास्त्र सौंपे गए थे।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



18- अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य से, पक्षकारों के बीच दुश्मनी सिद्ध हुई और पिछली मुकदमेबाजी और एक दूसरे को आपराधिक वादों में फँसाने से संबंधित दस्तावेज़ सिद्ध हुए, जिनका विचारण न्यायालय द्वारा पर्याप्त विवरण में निस्तारित किया गया है।

19- हम आगे पाते हैं कि मृतक का मृत्युकालिक कथन पी.डब्ल्यू.-7, तहसीलदार / मजिस्ट्रेट द्वारा दर्ज किया गया था और मृत्युकालिक कथन में मृतक ने केवल अपीलार्थी सुभाष के विरुद्ध अभिकथन किया था। उसने अपने बयान में किसी अन्य अभियुक्त का नाम नहीं लिया। हमने अभिलेख से पाया है कि मृत्युकालिक कथन डॉक्टर की उपस्थिति में दर्ज किया गया था और उसने प्रमाणित किया कि विवेक कुमार, जो उस समय घायल था, अपना मृत्युकालिक कथन दर्ज कराने के लिए मानसिक रूप से स्वस्थ स्थिति में था।

20- सर्वोच्च न्यायालय ने नईम बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2024 एससीसी आनलाइन एससी 237 के वाद में अभिनिर्धारित किया है कि मृत्युकालिक कथन दोषसिद्धि का एकमात्र आधार हो सकता है, यदि यह न्यायालय का पूर्ण विश्वास जगाता है और मृतक अपना बयान दर्ज कराते समय स्वस्थ मानसिक अवस्था में था और यह सिखाए-पढ़ाए जाने, तत्परता या कल्पना का परिणाम नहीं था।

21- आगे बढ़ने से पहले मृतक की चोट रिपोर्ट पर एक नज़र डालना आवश्यक है। पी.डब्ल्यू.-3 द्वारा विवेक कुमार का चिकित्सीय परीक्षण किया गया और उसके शरीर पर निम्नलिखित चोटें पाई गई :-

(i) दाहिने हाथ में आग्नेयास्त्र का घाव और प्रवेश, संख्या में 15, आकार 0.2 सेमी x 0.2 सेमी त्वचा की गहराई से लेकर मांसपेशियों की गहराई तक, कोई कालापन और झुलसना नहीं।

(ii) दाहिने हाथ के सामने और बाहरी हिस्से पर आग्नेयास्त्र का घाव आकार 0.2 सेमी x 0.2 सेमी, मांसपेशियों की गहराई तक की त्वचा संख्या में तीन (3)। कोई कालापन और झुलसना नहीं।

(iii) छाती और पेट के सामने तथा जांघ के ऊपरी हिस्से पर आग्नेयास्त्र का घाव, संख्या में एकाधिक, आकार 0.2 सेमी x 0.2 सेमी विभिन्न गहराई के।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



(iv) बाएँ अग्रबाहु पर आग्नेयास्त्र के एकाधिक घाव, आकार 0.2 सेमी x 0.2 सेमी, त्वचा की गहराई से मांसपेशियों की गहराई तक, कोई झुलसना नहीं।

चोट संख्या 3 को निगरानी में रखा गया और बाकी चोटें प्रकृति में साधारण पाई गईं। सभी चोटें आग्नेयास्त्रों द्वारा कारित की गई थीं। सभी चोटों की अवधि ताज़ा पाई गई।

22- उपरोक्त चोट रिपोर्ट का मात्र परिशीलन दर्शाता है कि मृतक को चार आग्नेयास्त्र के घाव लगे और उसे केवल छर्रे की चोटें आईं और उसे कोई गोली की चोट नहीं लगी। चोटें 0.2 सेमी के समान आकार के छर्रे के कारण हुईं और ऐसा प्रतीत होता है कि वे एक ही हथियार से कारित की गई थीं। मृतक ने अपने मृत्युकालिक कथन में उपरोक्त चोटों के कर्ता के रूप में एक ही अभियुक्त, अर्थात् सुभाष का नाम भी लिया है। चार छर्रे की चोटों में से, केवल चोट संख्या 3 मृतक के जीवन के लिए घातक साबित हुई। अन्य तीन चोटें मृतक के गैर-महत्वपूर्ण अंगों पर थीं। इसलिए, मृतक को एकमात्र घातक चोट कारित करने के लिए सभी तीन अपीलार्थियों की दोषसिद्धि न्यायोचित प्रतीत नहीं होती है।

23- अभियोजन का प्रकरण संदिग्ध हो गया, जब ऊपर नामित तीन अभियुक्तों को दोषमुक्त कर दिया गया, क्योंकि उन्हें सौंपे गए हथियार मृतक के विरुद्ध किसी अपराध के किए जाने में प्रयुक्त नहीं पाए गए थे। अभियोजन का प्रकरण यह नहीं है कि मृतक, अर्थात् विवेक कुमार के अलावा, किसी अन्य व्यक्ति को एक भी चोट लगी हो, यहाँ तक कि लाठी का प्रहार भी नहीं। कथित अपराध को अंजाम देने के लिए उन्हें सौंपा गया सामान्य आशय भी सिद्ध नहीं पाया गया।

24- इस वाद का एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू यह है कि विवेचना अधिकारी ने घायल व्यक्ति का बयान धारा 161 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत तब दर्ज नहीं किया, जब वह चोट लगने के बाद लगभग 22 दिनों तक जीवित था, घायल के जीवित रहते हुए, उसका बयान दर्ज न करने का विवेचना अधिकारी का आचरण एक महत्वपूर्ण मुद्दा है, जिसने अभियोजन के प्रकरण की विश्वसनीयता को प्रभावित किया है।

25- धारा 161 दंड प्रक्रिया संहिता पुलिस द्वारा साक्षी के परीक्षण का प्रावधान करती है। उप-धारा (1) यह प्रावधान करती है कि इस अध्याय के अंतर्गत विवेचना करने वाला कोई भी पुलिस अधिकारी, उस व्यक्ति का मौखिक परीक्षण कर सकता है, जिसके बारे में माना जाता है कि वह वाद के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित है और ऐसा व्यक्ति उप-धारा (2) के अंतर्गत ऐसे वाद

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



से संबंधित सभी सवालों के सही जवाब देने के लिए बाध्य होगा। उप-धारा (3) के अंतर्गत पुलिस अधिकारी इस धारा के अंतर्गत परीक्षण के दौरान उसे दिए गए किसी भी बयान को लेखबद्ध कर सकता है; और यदि वह ऐसा करता है, तो वह उसका एक अलग और सही रिकॉर्ड बनाएगा। धारा 161 दंड प्रक्रिया संहिता नीचे उद्धृत की गई है:-

"161- पुलिस द्वारा साक्षीगण का परीक्षण:- (1) इस अध्याय के अधीन विवेचना करने वाला कोई भी पुलिस अधिकारी, या ऐसे पद से उपर का कोई भी पुलिस अधिकारी, जिसे राज्य सरकार सामान्य या विशेष आदेश द्वारा इस निमित्त विहित करे, ऐसे अधिकारी की अपेक्षा पर कार्य करते हुए, उस व्यक्ति की मौखिक रूप से परीक्षण कर सकता है, जिसके बारे में माना जाता है कि वह वाद के तथ्यों और परिस्थितियों से परिचित है।

(2) ऐसा व्यक्ति ऐसे अधिकारी द्वारा उससे पूछे गए वाद से संबंधित सभी सवालों के सही जवाब देने के लिए बाध्य होगा, उन सवालों को छोड़कर जिनके जवाब उसे किसी आपराधिक आरोप या दंड या सम्पहरण के लिए उजागर करने की प्रवृत्ति रखते हैं।

(3) पुलिस अधिकारी इस धारा के अधीन परीक्षा के दौरान उसे दिए गए किसी भी बयान को लेखबद्ध कर सकता है; और यदि वह ऐसा करता है, तो वह ऐसे प्रत्येक व्यक्ति के बयान का एक अलग और सही अभिलेख बनाएगा, जिसका बयान वह दर्ज करता है।

बशर्ते कि इस उप-धारा के अधीन दिया गया बयान ऑडियो-वीडियो इलेक्ट्रॉनिक माध्यमों से भी दर्ज किया जा सकता है"

26- इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने **गोपाल कृष्ण बनाम राज्य, एआईआर 1964 इला 481** के वाद में यह टिप्पणी की है कि यदि यह स्पष्ट है कि यद्यपि पुलिस धारा 161 के अंतर्गत एक बाध्यता के रूप में साक्षीगण के बयान का रिकॉर्ड बनाने के लिए बाध्य नहीं है, लेकिन ऐसा करना उनका कर्तव्य है, जब साक्षी अभियोजन की कहानी को उजागर करने के लिए एक महत्वपूर्ण साक्षी हो।

27- हम पाते हैं कि यदि विवेचना अधिकारी ने घायल के मृत्यु से पहले उसका बयान दर्ज कर लिया होता, तो सुभाष के अलावा अन्य अभियुक्तों की भूमिका का पता लगाया जा सकता था।

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



28- आपराधिक अपील संख्या 810 वर्ष 2010 में अपीलार्थी सुभाष के अधिवक्ता का यह तर्क कि धारा 161 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत मृतक का बयान दर्ज न होने के कारण अपीलार्थी के बचाव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है, यह आधारहीन है। यह स्थापित विधि है कि विवेचना अधिकारी द्वारा धारा 161 दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दर्ज साक्षी के बयान का उपयोग जिरह में साक्षी का खंडन करने के उद्देश्य से किया जा सकता है, जो कि विवेचना अधिकारी द्वारा दर्ज किए गए उसके पिछले बयान के संबंध में है, जो कि उसके ध्यान को बयान के उन हिस्सों की ओर आकर्षित करके किया जाता है, जिनका उपयोग उसका खंडन करने के लिए किया जाता है। हालाँकि, वर्तमान वाद में, घायल की न्यायालय में उसका बयान दर्ज होने से पहले ही मृत्यु हो गई और इसलिए इस तर्क का कोई लाभ नहीं मिलेगा और इस संबंध में अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत कई निर्णय उसकी कोई मदद नहीं करेंगे।

29- हम पाते हैं कि अपीलार्थीगण सतीश और सरोज को इस वाद में केवल पक्षकारों के बीच पिछली दुश्मनी के कारण धारा 34 भा.द.सं. की मदद से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया है। दुश्मनी एक दोधारी तलवार है और इसका इस्तेमाल अभियुक्तों को झूठा फँसाने के लिए भी किया जा सकता है।

30- यदि सामान्य आशय सिद्ध हो जाता है, लेकिन व्यक्तिगत अभियुक्त को कोई प्रकट कृत्य नहीं सौंपा जाता है, तो धारा 34 भा.द.सं. आकर्षित होगी, क्योंकि इसमें प्रतिनिधिक दायित्व शामिल है, लेकिन जब अपराध में अभियुक्त की भागीदारी सिद्ध हो जाती है और सामान्य आशय अनुपस्थित होता है, तो धारा 34 भा.द.सं. का आह्वान नहीं किया जा सकता है। पूर्व-नियोजित योजना को सिद्ध करने की आवश्यकता होती है और यह पूर्व-सहमति यानी पूर्व-विचार-विमर्श की पूर्व-धारणा बनाती है। सामान्य आशय का अर्थ है पूर्व-निर्धारित योजना और उसी के अनुसरण में कार्य करना। इसे कृत्य करने से पहले एक बिंदु पर विद्यमान होना चाहिए। सामान्य आशय के कारण दो से अधिक अभियुक्तों द्वारा अपराध के किए जाने को सिद्ध करने का भार हमेशा अभियोजन पर होता है। इस वाद में पूर्वोक्त भार का निर्वहन अभियोजन द्वारा नहीं किया गया।

31- **महबूब शाह बनाम समाट (1945)** के वाद में प्रिवी काउंसिल ने धारा 34 भा.द.सं. के लागू होने से संबंधित निम्नलिखित सिद्धांत निर्धारित किए :-

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा ।



"(i) धारा 34 के अंतर्गत दायित्व का सार एक सामान्य आशय के अस्तित्व में पाया जाता है, जो अभियुक्त को ऐसे आशय के अग्रसरण में अपराध करने के लिए प्रेरित करता है।

(ii) धारा 34 के अंतर्गत कई अभियुक्तों को एक साथ जोड़ने के लिए, यह दिखाया जाना चाहिए कि किसी एक अभियुक्त ने सामान्य आशय के अग्रसरण में कोई अपराध किया है और तभी अपराध के लिए दायित्व किसी भी व्यक्ति पर उसी तरह थोपा जा सकता है, मानो कार्य केवल उसी के द्वारा किया गया हो।

(iii) सामान्य आशय पूर्व-नियोजित योजना और इस धारा को लागू करते हुए अभियुक्त को किसी अपराध का दोषी ठहराने के लिए यह सिद्ध किया जाना चाहिए कि आपराधिक कृत्य पूर्व-नियोजित योजना के अनुसार सहमति से किया गया था।

(iv) अधिकांश वादों में व्यक्ति के आशय को सिद्ध करने के लिए प्रत्यक्ष साक्ष्य प्राप्त करना बहुत कठिन है, यदि असंभव नहीं है, और इसका अनुमान व्यक्ति के आचरण और वाद की अन्य प्रासंगिक परिस्थितियों से लगाया जाना चाहिए।

(v) भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के अंतर्गत यथा-प्रदानित सामान्य आशय का निष्कर्ष तब तक नहीं निकाला जाना चाहिए जब तक कि ऐसी बाध्यकारी परिस्थितियाँ विद्यमान न हों और ऐसा सामान्य आशय वाद की परिस्थितियों से निकाला जाने वाला, एक आवश्यक निष्कर्ष न हो।

(vi) इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि समान आशय को सामान्य आशय समझने की भूल न की जाए, भले ही दोनों को अलग करने वाली रेखा बहुत पतली हो, लेकिन फिर भी वे दो अलग-अलग अवधारणाएँ हैं और भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के अंतर्गत दायित्व जोड़ने के लिए, ऐसे सामान्य आशय के अग्रसरण में अपराध करने के साथ-साथ सामान्य आशय एक आवश्यक पूर्व-शर्त है।"

32- **जय भगवान बनाम हरियाणा राज्य 1999 एआईआर(एससी) 1083** के वाद में, सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्तर 11 में यह अभिनिर्धारित किया:-

"11. धारा 34, भा.द.सं. को लागू करने के लिए इस तथ्य के अलावा कि दो या दो से अधिक अभियुक्त होने चाहिए, दो कारक स्थापित किए जाने चाहिए: (i) सामान्य आशय

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



और (ii) अपराध के किए जाने में अभियुक्त की भागीदारी। यदि सामान्य आशय सिद्ध हो जाता है, लेकिन व्यक्तिगत अभियुक्त को कोई प्रकट कृत्य नहीं सौंपा जाता है, तो धारा 34 आकर्षित होगी, क्योंकि इसमें मुख्य रूप से प्रतिनिधिक दायित्व शामिल है, लेकिन यदि अपराध में अभियुक्त की भागीदारी सिद्ध हो जाती है और सामान्य आशय अनुपस्थित है, तो धारा 34 का आह्वान नहीं किया जा सकता है। हर वाद में सामान्य आशय का प्रत्यक्ष साक्ष्य होना संभव नहीं है। इसका अनुमान प्रत्येक वाद के तथ्यों और परिस्थितियों से लगाया जाना चाहिए।"

33- कृष्णमूर्ति उर्फ गोनुडु और अन्य बनाम कर्नाटक राज्य 2022 0 सुप्रीम(एससी) 268 के वाद में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रस्तर संख्या 18 और 19 में यह टिप्पणी की गई थी:-

"18. धारा 34 भा.द.सं. एक सह-अपराधी, जिसने अपराध में भाग लिया था, को संयुक्त दायित्व के सिद्धांत पर समान रूप से उत्तरदायी बनाती है। धारा 34 को लागू करने के लिए सह-अपराधियों के बीच सामान्य आशय होना चाहिए, जिसका अर्थ है कि उद्देश्य की समानता और सामान्य योजना या पूर्व-नियोजित योजना होनी चाहिए। हालाँकि, इसका अर्थ यह नहीं है कि सह-अपराधियों को किसी चर्चा, समझौते या मूल्यांकन में संलग्न होना चाहिए। धारा 34 को लागू करने के लिए, यह आवश्यक नहीं है कि आपराधिक कृत्य किए जाने से काफी समय पहले योजना पूर्व-नियोजित या रची गई हो। सामान्य आशय वास्तविक कृत्य होने से ठीक एक मिनट पहले बन सकता है। सामान्य आशय आवश्यक रूप से एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है क्योंकि इसके लिए पूर्व विचार-विमर्श की आवश्यकता होती है। ऐसे वाद में, प्रत्यक्ष साक्ष्य सामान्यतः उपलब्ध नहीं होंगे और अधिकांश प्रकरणों में, सामान्य आशय विद्यमान है या नहीं, इसका निर्धारण सिद्ध हुए तथ्यों से निष्कर्ष निकालकर किया जाना चाहिए। इसके लिए घटना के समय और बाद में सह-प्रतिभागियों या अपराधियों के पूर्ववृत्त और आचरण की जांच आवश्यक है। अभियुक्तों के आने का तरीका, हमला शुरू करना, कारित की गई चोटों की प्रकृति और प्रकार, प्रयुक्त हथियार, सह-हमलावरों /अपराधियों के आचरण या कृत्य, घटना या हमले के पीछे का उद्देश्य और प्रयोजन आदि सभी प्रासंगिक तथ्य हैं जिनसे यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि धारा 34 भा.द.सं. के आवश्यक तत्व पूरे होते हैं या नहीं। हमें याद रखना चाहिए कि धारा 34 भा.द.सं. सह-अपराधियों के विरुद्ध इसलिए लागू होती है क्योंकि उन्होंने मुख्य या प्रमुख कृत्य नहीं

अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



किया है, जो मुख्य अपराधी या अपराधी द्वारा किया जाता है/निष्पादित किया जाता है या उसे सौंपा जाता है। जहाँ कोई अभियुक्त मुख्य या अंतिम अपराधी है, वहाँ धारा 34 भा.द.सं. का सहारा लेना आवश्यक नहीं है क्योंकि उक्त अपराधी स्वयं व्यक्तिगत रूप से चोट/अपराध कारित करने के लिए उत्तरदायी है। कोई व्यक्ति अपने स्वयं के कृत्यों के लिए उत्तरदायी होता है। अन्य सह-प्रतिभागियों को फँसाने और उन पर संयुक्त दायित्व मढ़ने के लिए धारा 34 या सामान्य आशय के सिद्धांत का आह्वान किया जाता है। इसके अलावा, धारा 34 भा.द.सं. में "आपराधिक कृत्य" अभिव्यक्ति/शब्द प्रभाव, परिणाम या फल से भिन्न भौतिक कृत्य को संदर्भित करता है, जो सह-अपराधियों/प्रतिभागियों द्वारा किया गया है। दूसरे शब्दों में, धारा 34 भा.द.सं. में संदर्भित "आपराधिक कृत्य" अभिव्यक्ति "अपराध" से भिन्न है। उदाहरण के लिए, यदि क और ख, ग पर लाठी से प्रहार करते हैं, तो आपराधिक कृत्य लाठी से प्रहार करना है, जबकि किया गया अपराध हत्या, आपराधिक मानव वध या साधारण या गंभीर चोट हो सकता है। "सामान्य आशय" अभिव्यक्ति को भा.द.सं. के अंतर्गत कई अपराधों के एक आवश्यक तत्व के रूप में "आशय" या "आपराधिक मनःस्थिति" समझने की भूल नहीं की जानी चाहिए। आशय किसी अपराध का एक तत्व हो सकता है और यह एक व्यक्तिगत मामला है। कुछ अपराधों के लिए, मानसिक आशय कोई आवश्यकता नहीं है, लेकिन ज्ञान पर्याप्त है और आवश्यक आपराधिक मनःस्थिति का गठन करता है। उक्त अपराध के लिए भी धारा 34 भा.द.सं. का आह्वान किया जा सकता है [अब्राहिम शेख और अन्य (उपरोक्त) का संदर्भ लें]। सामान्य आशय सामान्य योजना या सामान्य आशय है, जो उद्देश्य या प्रयोजन के समान है। आपराधिक कृत्य बनाने वाले व्यक्तिगत भागीदार द्वारा सभी कृत्य करने के पीछे यह कारण या प्रयोजन है। कुछ प्रकरणों में, आशय, जो अपराध का तत्व है, सह-अपराधियों के सामान्य आशय के समान हो सकता है, लेकिन यह अनिवार्य नहीं है।

19. धारा 34 भा.द.सं. "सामान्य आशय के अग्रसरण में कृत्य" अभिव्यक्ति का भी उपयोग करती है। इसलिए, प्रत्येक वाद में जब धारा 34 का आह्वान किया जाता है, तो यह जांचना आवश्यक है कि क्या आरोपित आपराधिक अपराध प्रतिभागी के सामान्य आशय के अग्रसरण में किया गया था। यदि आपराधिक अपराध सामान्य आशय से स्पष्ट रूप से दूर और असंबद्ध है, तो धारा 34 लागू नहीं होगी। हालाँकि, यदि किया गया या निष्पादित आपराधिक



अपराध उत्तरदायी था या मुख्य रूप से जुड़ा हुआ था या पूर्व-सहमति/समकालीन संलिप्तता का एक ज्ञात या यथोचित रूप से संभावित परिणाम था या सामान्य प्रयोजन को पूरा करने के लिए आपसी सहमति की अभिव्यक्ति था, तो यह सामान्य आशय के अग्रसरण में किए गए कृत्य के दायरे और परिधि के भीतर आएगा। इस प्रकार, "अग्रसरण" शब्द एक विस्तृत दायरा प्रस्तुत करता है, लेकिन इसे विधि के आशय और उद्देश्य से परे विस्तारित नहीं किया जाना चाहिए। रसेल ऑन क्राइम, (10वां संस्करण पृष्ठ 557), "अग्रसरण" शब्द का परीक्षण करते हुए कहा गया था कि यह "आगे बढ़ने में मदद करने की क्रिया" को संदर्भित करता है और "यह किसी प्रकार की सहायता या सहायता को इंगित करता है, जो भविष्य में एक प्रभाव पैदा करती है" और कि "किसी भी कार्य को अंतिम घोर अपराध को अंजाम देने के उद्देश्य से जानबूझकर उठाया गया कदम माना जा सकता है यदि यह उस घोर अपराध को अंजाम देने के उद्देश्य से उठाया गया हो।" एक ऐसा कार्य जो सामान्य आशय के लिए बाहरी है या इसके विरोध में किया जाता है और सामान्य आशय को पूरा करने के लिए बिल्कुल भी किए जाने की आवश्यकता नहीं है, उसे सामान्य आशय के अग्रसरण में नहीं कहा जा सकता है।"

34- उपरोक्त विचार के दृष्टिगत, हमारा विचार है कि अभियोजन के साक्षीगण ने केवल पक्षकारों के बीच पिछली मुकदमेबाजी को, न कि सामान्य आशय के अग्रसरण में कथित अपराध करने के सभी अभियुक्तों के सामान्य आशय को सिद्ध करने के लिए किसी पूर्व-नियोजन और पूर्व विचार-विमर्श को सिद्ध किया।

35- इसलिए, हमारा विचार है कि आपराधिक अपील संख्या 690 वर्ष 2010 में अपीलार्थी सतीश और सरोज संदेह का लाभ पाने के हकदार हैं, क्योंकि अभियोजन विवादित अपराध कारित करने में उनके सामान्य आशय को सिद्ध नहीं कर पाया है। अभियोजन उनके विरुद्ध उचित संदेह से परे अपना प्रकरण सिद्ध नहीं कर पाया है। पुरानी दुश्मनी और संदेह के कारण, उन्हें तीन अन्य सह-अभियुक्तों के साथ फँसाया गया प्रतीत होता है, जिन्हें विचारण न्यायालय द्वारा पहले ही दोषमुक्त कर दिया गया है, जिन्हें भी इस वाद में धारा 34 भा.द.सं. की मदद से फँसाया गया था।

36- हालाँकि, आराधिक अपील संख्या 810 वर्ष 2010 में अपीलार्थी सुभाष की दोषसिद्धि और सजा बरकरार रखी जाती है। अपीलार्थी सतीश और सरोज जमानत पर हैं। उनके जमानत बंधपत्र निरस्त अस्वीकरण: अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिए प्रयोग नहीं किया जा सकता है। सभी कानूनी और सरकारी उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।



किए जाते हैं और प्रतिभू उन्मोचित किए जाते हैं। उन्हें आत्मसमर्पण करने की आवश्यकता नहीं है।

37- आपराधिक अपील संख्या 810 वर्ष 2010 खारिज की जाती है, जबकि आपराधिक अपील संख्या 690 वर्ष 2010 स्वीकार की जाती है।

38- विचारण न्यायालय के अभिलेख, इस निर्णय की प्रति के साथ विचारण न्यायालय को वापस कर दिया जाए।

4 फरवरी, 2026

रोहित

(न्यायमूर्ति जय कृष्ण उपाध्याय) (न्यायमूर्ति सिद्धार्थ)